इन्हें बचाएं – जैव विविधता बढ़ाएं

सोनाली गोयल
पुणे (महाराष्ट्र)

पीपल (अंग्रेजीः सैकरेड फिग, संस्कृतःअश्वत्थ) भारत, नेपाल, श्रीलंका, चीन और इंडोनेशिया में पाया जाने वाला बरगद, या गूलर की जाति का एक विशालकाय वृक्ष है जिसे भारतीय संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है तथा अनेक पर्वों पर इसकी पूजा की जाती है। बरगद और गूलर वृक्ष की भांति इसके पुष्प भी गुप्त रहते हैं अतः इसे 'गुह्यपुष्पक' भी कहा जाता है। अन्य क्षीरी (दूध वाले) वृक्षों की तरह पीपल भी दीर्घायु होता है। स्वास्थ्य के लिए पीपल को अति उपयोगी माना गया है। पीलिया, रतौंधी, मलेरिया, खाँसी और दमा तथा सर्दी और सिर दर्द में पीपल की टहनी, लकड़ी, पत्तियों, कोपलों और सीकों के प्रयोग का उल्लेख मिलता है।

पीपल का पत्ता

भारतीय संस्कृति में पीपल देववृक्ष है, इसके सात्विक प्रभाव के स्पर्श से अन्तः चेतना पुलकित और प्रफुल्लित होती है। स्कन्द पुराण में वर्णित है कि अश्वत्थ (पीपल) के मूल में विष्णु, तने में केशव, शाखाओं में नारायण, पत्तों में श्रीहरि और फलों में सभी देवताओं के साथ अच्युत सदैव निवास करते हैं। पीपल भगवान विष्णु का जीवन्त और पूर्णतः मूर्तिमान स्वरूप है भगवान कृष्ण कहते हैं– समस्त वृक्षों में मैं पीपल का वृक्ष हूं। स्वयं भगवान ने उससे अपनी उपमा देकर पीपल के देवत्व और दिव्यत्व को व्यक्त किया है। शास्त्रों में वर्णित है कि पीपल की सविधि पूजा–अर्चना करने से सम्पूर्ण देवता स्वयं ही पूजित हो जाते हैं। पीपल का वृक्ष लगाने वाले की वंश परम्परा कभी विनष्ट नहीं होती। पीपल की सेवा करने वाले सद्गति प्राप्त करते हैं। पीपल वृक्ष की प्रार्थना के लिए अश्वत्थस्तोत्र में पीपल की प्रार्थना का मंत्र भी दिया गया है। प्रसिद्ध ग्रन्थ व्रतराज में अश्वत्थोपासना में पीपल वृक्ष की महिमा का उल्लेख है।

शीशम बहुपयोगी वृक्ष है। इसकी लकड़ी, पत्तियां, जड़ें सभी काम में आती हैं। लकड़ियों से फर्नीचर बनता है। पत्तियां पशुओं के लिए प्रोटीनयुक्त चारा होती हैं। जड़ें भूमि को अधिक उपजाऊ बनाती हैं। पत्तियां व शाखाएं वर्षा–जल की बूंदों को धीरे–धीरे जमीन पर गिराकर भू–जल भंडार बढ़ाती हैं।

शीशम की लकड़ी भारी, मजबूत व बादामी रंग की होती है। इसके अंतः काष्ठ की अपेक्षा बाह्य काष्ठ का रंग हल्का बादामी या भूरा सफेद होता है। लकड़ी के इस भाग में कीड़े लगने की आशंका रहती है। इसलिए इसे नीला थोथा, जिंक क्लोराइड या अन्य कीटनाशक रसायनों से उपचारित करना जरूरी है। शीशम के 10–12 वर्ष के पेड़ के तने की गोलाई 70–75 व 25–30 वर्ष के पेड़ के तने की गोलाई 135 सेमी तक हो जाती है। इसके एक घनफीट लकड़ी का वजन 22.5 से 24.5 किलोग्राम तक होता है। असम से प्राप्त लकड़ी कुछ हल्की 19–20 किलोग्राम प्रति घनफुट वजन की होती है।

मंदार (वानस्पतिक नाम : Calotropis gigantea) एक औषधीय पादप है। इसको **मंदार, आक, अर्क,** और **अकौआ** भी कहते हैं। इसका वृक्ष छोटा और छत्तादार होता है। पत्ते बरगद के पत्तों के समान मोटे होते हैं। हरे सफेदी लिये पत्ते पकने पर पीले रंग के हो जाते हैं। इसका फूल सफेद, छोटा छत्तादार होता है। फूल पर रंगीन चित्तियां होती हें। फल आम के तुल्य होते हैं जिनमें रूई होती है। आक की शाखाओं में दूध निकलता है। वह दूध विष का काम देता है। आक गर्मी के दिनों में रेतीली भूमि पर होता है। चौमासे में पानी बरसने पर सूख जाता है।

आक के पौधे शुष्क, ऊसर और ऊँची भूमि में प्रायः सर्वत्र देखने को मिलते हैं। इस वनस्पति के विषय में साधारण समाज में यह भ्रान्ति फैली हुई है कि आक का पौधा विषैला होता है, यह मनुष्य को मार डालता है। इसमें किंचित सत्य जरूर है क्योंकि आयुर्वेद संहिताओं में भी इसकी गणना उपविषों में की गई है। यदि इसका सेवन अधिक मात्रा में कर लिया जाये तो, उल्टी दस्त होकर मनुष्य की मृत्यु हो सकती है। इसके विपरीत यदि आक का सेवन उचित मात्रा में, योग्य तरीके से, चतुर वैद्य की निगरानी में किया जाये तो अनेक रोगों में इससे बड़ा उपकार होता है।

प्रकार

अर्क इसकी तीन जातियां पाई जाती हैं–जो निम्न प्रकार है:–

(1) **रक्तार्क (Calortopis gigantean) :** इसके पुष्प बाहर से श्वेत रंग के छोटे कटोरीनुमा और भीतर लाल और बैंगनी रंग की चित्ती वाले होते हैं। इसमें दूध कम होता है।

(2) **श्वेतार्क** : इसका फूल लाल आक से कुछ बड़ा, हल्की पीली आभा लिये श्वेत करबीर पुष्प सदृश होता है। इसका केशर भी बिल्कुल सफेद होती है। इसे मंदार भी कहते हैं। यह प्रायः मन्दिरों में लगाया जाता है। इसमें दूध अधिक होता है।

(3) **राजार्क** : इसमें एक ही टहनी होती है, जिस पर केवल चार पत्ते लगते हैं, इसके फूल चांदी के रंग जैसे होते हैं, यह बहुत दुर्लभ जाति है। इसके अतिरिक्त आक की एक और जाति पाई जाती है। जिसमें पिस्तई रंग के फूल लगते हैं।

चिकित्सा में उपयोग

आक का हर अंग दवा है, हर भाग उपयोगी है। यह सूर्य के समान तीक्ष्ण तेजस्वी और पारे के समान उत्तम तथा दिव्य रसायनधर्मा हैं। कहीं–कहीं इसे 'वानस्पतिक पारद' भी कहा गया है।

- ❖ आक के पीले पत्ते पर घी चुपड कर सेक कर अर्क निचोड़ कर कान में डालने से आधा सिर दर्द जाता रहता है। बहरापन दूर होता है। दांतों और कान की पीड़ा शांत हो जाती है।
- ❖ आक के कोमल पत्ते मीठे तेल में जला कर अण्डकोश की सूजन पर बांधने से सूजन दूर हो जाती है। तथा कडुवें तेल में पत्तों को जला कर गरमी के घाव पर लगाने से घाव अच्छा हो जाता है। एवं पत्तों पर कत्था चूना लगा कर पान समान खाने से दमा रोग दूर हो जाता है तथा हरा पत्ता पीस कर लेप करने से सूजन चली जाती है।
- ❖ कोमल पत्तों के धुंए से बवासीर शांत होती है। कोमल पत्ते खायें तो ताप तिजारी रोग दूर हो जाता है।
- ❖ आक के पत्तों को गरम करके बांधने से चोट अच्छी हो जाती है। सूजन दूर हो जाती है। आक के फूल को जीरा, काली मिर्च के साथ बालक को देने से बालक की खांसी दूर हो जाती है।
- ❖ दूध पीते बालक को माता अपना दूध में देवे तथा मंदार के फल की रूई रूधिर बहने के स्थान पर रखने से रूधिर बहना बन्द हो जाता है। आक का दूध लेकर उसमें काली मिर्च पीस कर भिगोवे फिर उसको प्रतिदिन प्रातः समय मासे भर खाय 9 दिन में कुत्ते का विष शांत हो जाता है। परंतु कुत्ता काटने के दिन से ही खावे। आक का दूध पांव के अंगूठे पर लगाने से दुखती हुई आंख अच्छी हो जाती है। बवासीर के मस्सों पर लगाने से मस्से जाते रहते हैं। बर्रे काटे में लगाने से दर्द नहीं होता चोट पर लगाने से चोट शांत हो

जाती है। जहां के बाल उड़ गये हों वहां पर आक का दूध लगाने से बाल उग आते हैं। तलुओं पर लगाने से महीने भर में मृगी रोग दूर हो जाता है। आक के दूध का फाहा लगाने से मुंह का लक्वा सीधा हो जाता है। आक की छाल को पीस कर घी में भूने फिर चोट पर बांधें तो चोट की सूजन दूर हो जाती है। तथा आक की जड़ को दूध में औटा कर घी निकाले वह घी खाने से नहरूआं रोग जाता रहता है।

जड़ के उपयोग

आक की जड़ को पानी में घिस कर लगाने से नाखूना रोग अच्छा हो जाता है। तथा आक की जड़ छाया में सुखाकर पीसने और उसमें गुड़ मिलाकर खाने से शीत ज्वर शांत हो जाता है एवं आक की जड़ 2 सेर लेकर उसको चार सेर पानी में पकाकर जब आधा पानी रह जाय तब जड़ निकालें और पानी में 2 सेर गेहूं छोड़े जब जल नहीं रहे तब सुखा कर उन गेहूंओं का आटा पीसकर पावभर आटा की बाटी या रोटी बनाकर उसमें गुड़ और घी मिलाकर प्रतिदिन खाने से गठिया बाद दूर होती है। बहुत दिन की गठिया 21 दिन में अच्छी हो जाती है। तथा आक की जड़ के चूर्ण में काली मिर्च पीस कर मिलाएं और रत्ती–रत्ती भर की गोलियां बनाकर इन गोलियों को खाने से खांसी दूर होती है तथा आक की जड़ पानी में घिसकर लगाने से नाखूना रोग जाता रहता है। तथा आक की जड़ के छाल के चूर्ण से अदरक का अर्क और काली मिर्च पीसकर मिलाएं और 2–2 रत्ती भर की गोलियां बनाएं इन गोलियों से हैजा रोग दूर होता है।

आक की जड़ की राख में कडुआ तेल मिलाकर लगाने से खुजली अच्छी हो जाती हे। आक की सूखी डंडी लेकर उसे एक तरफ से जलावे और दूसरी ओर से नाक द्वारा उसका धुंआ जोर से खींचे सिर का दर्द तुरंत अच्छा हो जाता है। आक का पत्ता और ड्ण्ठल पानी में डाल कर रखे उसी पानी से आबदस्त ले तो बवासीर अच्छी हो जाती है। आक की जड़ का चूर्ण गरम पानी के साथ सेवन करने से उपदंश (गर्मी) रोग अच्छा हो जाता है। उपदंश के घाव पर भी आक का चूर्ण छिड़कना चाहिये। आक ही के काड़े से घाव धोएं। आक की जड़ के लेप से बिगड़ा हुआ फोड़ा अच्छा हो जाता है। आक की जड़ की चूर्ण 1 माशा तक ठण्डे पानी के साथ खाने से प्लेग होने का भय नहीं रहता। आक की जड़ का चूर्ण दही के साथ खाने से स्त्री के प्रदर रोग दूर होता है। आक की जड़ का चूर्ण 1 तोला, पुराना गुड़ 4 तोला, दोनों की चने की बराबर गोली बनाकर खाने से कफ की खांसी अच्छी हो जाती है। आक की जड़ पानी में घिस कर पिलाने से सर्प विष दूर होता है। आक की जड़ का धुंआ पीने से आतशक (सुजाक) रोग ठीक हो जाता है। इसमें बेसन की रोटी और घी खाना चाहिये और नमक छोड़ देना चाहिये। आक की जड़ और पीपल की छाल का भष्म लगाने से नासूर अच्छा हो जाता है। आक की जड़ का चूर्ण का धुंआ पीकर ऊपर से बाद में दूध गुड़ पीने से श्वास बहुत जल्दी अच्छा हो जाता है।

आक की दातून करने से दांतों के रोग दूर होते हैं। आक की जड़ का चूर्ण 1 माशा तक खाने से शरीर का शोथ (सूजन) अच्छा हो जाता है। आक की जड़ 5 तोला, असगंध 5 तोला, बीजबंध 5 तोला, सबका चूर्ण कर गुलाब के जल में खरल कर सुखावे इस प्रकार 3 दिन गुलाब के अर्क में घोटें बाद में इसका 1 माशा चूर्ण शहद के साथ चाट कर उपर से दूध पीएं तो प्रमेह रोग जल्दी अच्छा हो जाता है। आक की जड़ को काड़े में सुहागा भिगो कर आग पर फुला लें मात्रा 1 रत्ती से 4 रत्ती तक यह 1 सेर दूध को पचा देता है। जिनको दूध नहीं पचता वे इसे सेवन कर दूध खूब हजम कर सकते हैं। आक की पत्ती और चौथाई सेंधा नमक एक में कूट कर हण्डी में रख कर कपरौटी आग में फूंक दें। बाद में निकाल कर चूर्ण कर शहद या पानी के साथ 1 माशा तक सेवन करने से खांसी, दमा, प्लीहा रोग शांत हो जाता है। आक का दूध लगाने से ऊंगलियों का सड़ना दूर होता है।

इन्हें बचाएं, जैव विविधता बनाएं

मारवाड़ के स्थानीय पर्यावरण में पाए जाने वाले कई पेड़–पौधों एवं जीव–जंतुओं की प्रजातियों की संख्या में तेजी से कमी आई है। स्थानीय जैव विविधता का अहम हिस्सा माने जाने वाले इन पेड़–पौधों व जीव–जंतुओं के अभाव में यहां पर पर्यावरण संतुलन भी निरंतर बिगड़ता जा रहा है। ऐसे में यह जरूरी हो जाता है कि हम सभी मिलकर इन्हें बचाएं ताकि मारवाड़ की जैव विविधता को कायम रखा जा सके।

चिंकारा : मरू भूमि का शर्मीला जीव माना जाने वाला चिंकारा आज सीमित संख्या में रह गए हैं। लंबे समय तक बिना पानी पीए रह सकने की अपनी विशिष्ट क्षमता के कारण ये रेगिस्तान की कठोर जलवायु में रहते आए हैं। लेकिन, निरंतर होते अवैध शिकार के कारण इनका अस्तित्व खतरे में है। इसके अलावा घास के मैदानों में कमी और बढ़ती मानवीय आबादी से सीमित क्षेत्रों में रह गए हैं।

काले हिरण : 80 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से दौड़ने वाले इस हिरण की संख्या में भी निंरतर गिरावट दर्ज की गई है। यह एक ऐसी प्रजाति है जिसमें नर हिरण की खाल चटकदार काले रंग की होती है और बड़े–बड़े सींग होते हैं। मादा के सींग नहीं होते हैं और रंग भूरा होता है। इनका शिकार मुख्यतः खाल व मीट के लिए किया जाता है, जिससे इनकी संख्या घटी है। इसके अलावा चारागाहों के खत्म होने से और मवेशियों से प्राप्त बीमारियों के कारण भी इनकी आबादी में कमी आई है।

गोडावण : राजस्थान के राज्य पक्षी का दर्जा प्राप्त गोडावण आज विलुप्त होने के कगार पर पहुंच गया है। वन्यजीव गणना आंकड़ों के अनुसार थार में गोडावण का मुख्य आश्रय स्थली माने जाने वाले राष्ट्रीय मरू उद्यान में भी महज 45 गोडावण ही बचे हैं। गोडावण मुख्यतः बड़ी–बड़ी घासों के बीच जमीन पर अपना घोंसला बनाते हैं। लेकिन, अनियमित चराई के कारण घास के मैदानों में आई कमी से इनके आवास स्थल खत्म हो रहे हैं। साथ ही मवेशियों द्वारा इनके अंडे कुचले जाने से भी इनकी संख्या वृद्धि में कमी आई है।

खेजड़ी : मरूस्थली पर्यावरण में सहजता से उगने वाली खेजड़ी राजस्थान का राज्य पेड़ है। मारवाड़ की पहचान माना जाने वाला यह पेड़ शुष्क जलवायु में बिना पानी के आसानी से उग जाता है। इसकी जड़ें जमीन के अंदर 100 फीट तक उतर जाती है जिससे यह पानी की अपनी जरूरतें पूरी कर लेता है। यह एक प्रकार का बहुपयोगी पेड़ है जिसका हर भाग किसी ना किसी काम में लिया जा सकता है। इसकी पत्तियों को सुखाकर चारे के रूप में मवेशियों को खिलाया जाता है। खेजड़ी से सांगरी भी मिलती है जिसे मारवाड़ में सब्जी के रूप में बड़े चाव से खाया जाता है। ग्रामवासी इन्हें बेचकर अपनी आजीविका चलाते हैं। इन तमाम उपयोगिताओं के बावजूद आज यह पेड़ अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है। कई प्रकार की अवांछित प्रजातियों के पनपने से इनके फैलाव में तेजी से कमी आई है।

रोहिड़ा : यह पेड़ भी केवल मरूस्थलीय पर्यावरण में पाया जाता है। इस पेड़ की सबसे बड़ी खासियत है इसमें लगने वाले फूल। बसंत ऋतु में खिलने वाले केसरिया नारंगी रंग के फूल काफी सुंदर होते हैं। फूलों की सुंदरता के कारण ही इन्हें राजस्थान के राज्य फूल का दर्जा मिला है। इस पेड़ की लकड़ी काफी उपयोगी होती है और इनसे फर्नीचर बनाया जाता है, जिससे बाजार में मांग बनी रहती है। एक समय बहुतायात में पाया जाने वाला यह पेड़ भी अब सीमित संख्या में ही पाए जाते हैं।

कैर : कैर भी मरूस्थलीय पर्यावरण का एक अहम हिस्सा है। कैर एक प्रकार की झाड़ी होती है जिसमें छोटे–छोटे फल लगते हैं और इन्हें कैर कहते हैं। यह कैर ग्रामवासियों की आजीविका का मुख्य स्रोत है। ग्रामवासी इन्हें एकत्रित करते हैं और बाजार में बेचते हैं। बाजार में बेचने से ग्रामवासियों को अच्छी आय होती है और आजीविका का एक माध्यम बना रहता है।

जाल : यह एक स्थानीय प्रजाति है जिसके फलों को ग्रामीण बड़े चाव से खाते हैं। इस पेड़ से प्राप्त होने वाला फल पीलू कहलाता है। यह फल पीले रंग का होता है और अंगूर के आकार व स्वाद जैसा होता है। यह फल भी ग्रामवासियों के लिए आजीविका का एक माध्यम है। ग्रामवासी इन्हें एकत्रित कर बाजार में बेचकर कुछ आय अर्जित कर लेते हैं। यह पेड़ काफी घना होता है जिससे कड़ी धूप में छोटे–बड़े जीव जंतुओं को आसरा मिलता है। इसके संरक्षण में कमी के कारण यह भी सीमित संख्या में रह गए हैं।

प्रत्येक भाषा की अपनी संस्कृति होती है, जिसके विस्तार के साथ उस भाषा का भी विस्तार होता है।

अनन्तशयनम आयंगर